मर्यादा के दृष्टिकोण से

भगवान श्री राम और श्री कृष्ण

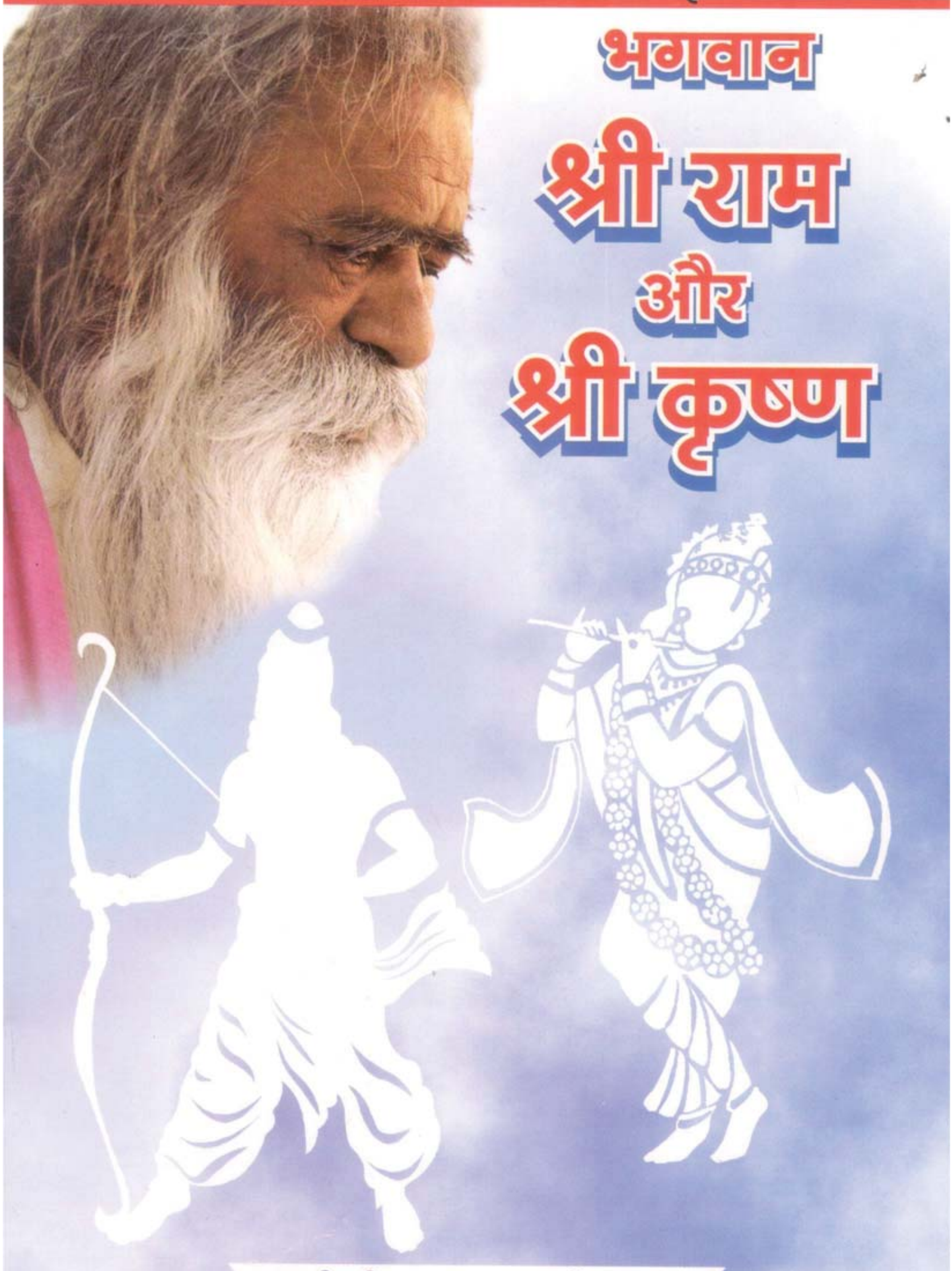

स्वामी श्री अड़गड़ानन्द जी महाराज

॥ ॐ नमः सद्गुरुदेवाय ॥

राम और कृष्ण
मर्यादा के दृष्टिकोण

संकलनकर्ता एवं व्याख्याकार :

स्वामी श्री अड़गड़ानन्दजी

श्री परमहंस आश्रम, शक्तेषगढ़, चुनार-मिर्जापुर (उ० प्र०)

प्रकाशक :

श्री परमहंस स्वामी अड़गड़ानन्दजी आश्रम ट्रस्ट

न्यू अपोलो स्टेट, गाला नं- ५, मोगरा लेन (रेलवे सब वे के पास)

अंधेरी (पूर्व), मुम्बई - ४०००६९

प्रकाशक :
श्री परमहंस स्वामी अड़गड़ानन्दजी आश्रम ट्रस्ट
न्यू अपोलो स्टेट, गाला नं- 5, मोगरा लेन (रेलवे सब वे के पास)
अंधेरी (पूर्व), मुम्बई - 400 069 (भारत)
ई-मेल - contact@yatharthgeeta.com
वेबसाइट - www.yatharthgeeta.com

© प्रकाशक

संस्करण– जनवरी सन् 2017 - 0,000 प्रतियाँ

अनन्तश्री विभूषित,

योगिराज, युग पितामह

परमपूज्य श्री स्वामी परमानन्द जी

श्री परमहंस आश्रम अनुसुइया–चित्रकूट

के परम पावन चरणों में

सादर समर्पित

अन्तःप्रेरणा

गुरु-वन्दना

।। ॐ श्री सद्गुरुदेव भगवान् की जय ।।

जय सद्गुरुदेवं, परमानन्दं, अमर शरीरं अविकारी।
निर्गुण निर्मूलं, धरि स्थूलं, काटन शूलं भवभारी।।

सूरत निज सोहं, कलिमल खोहं, जनमन मोहन छविभारी।
अमरापुर वासी, सब सुख राशी, सदा एकरस निर्विकारी।।

अनुभव गम्भीरा, मति के धीरा, अलख फकीरा अवतारी।
योगी अद्वैष्टा, त्रिकाल द्रष्टा, केवल पद आनन्दकारी।।

चित्रकूटहिं आयो, अद्वैत लखायो, अनुसुइया आसन मारी।
श्री परमहंस स्वामी, अन्तर्यामी, हैं बड़नामी संसारी।।

हंसन हितकारी, जग पगुधारी, गर्व प्रहारी उपकारी।
सत्-पंथ चलायो, भरम मिटायो, रूप लखायो करतारी।।

यह शिष्य है तेरो, करत निहोरो, मोपर हेरो प्रणधारी।
जय सद्गुरु.........भारी।।

।। ॐ ।।

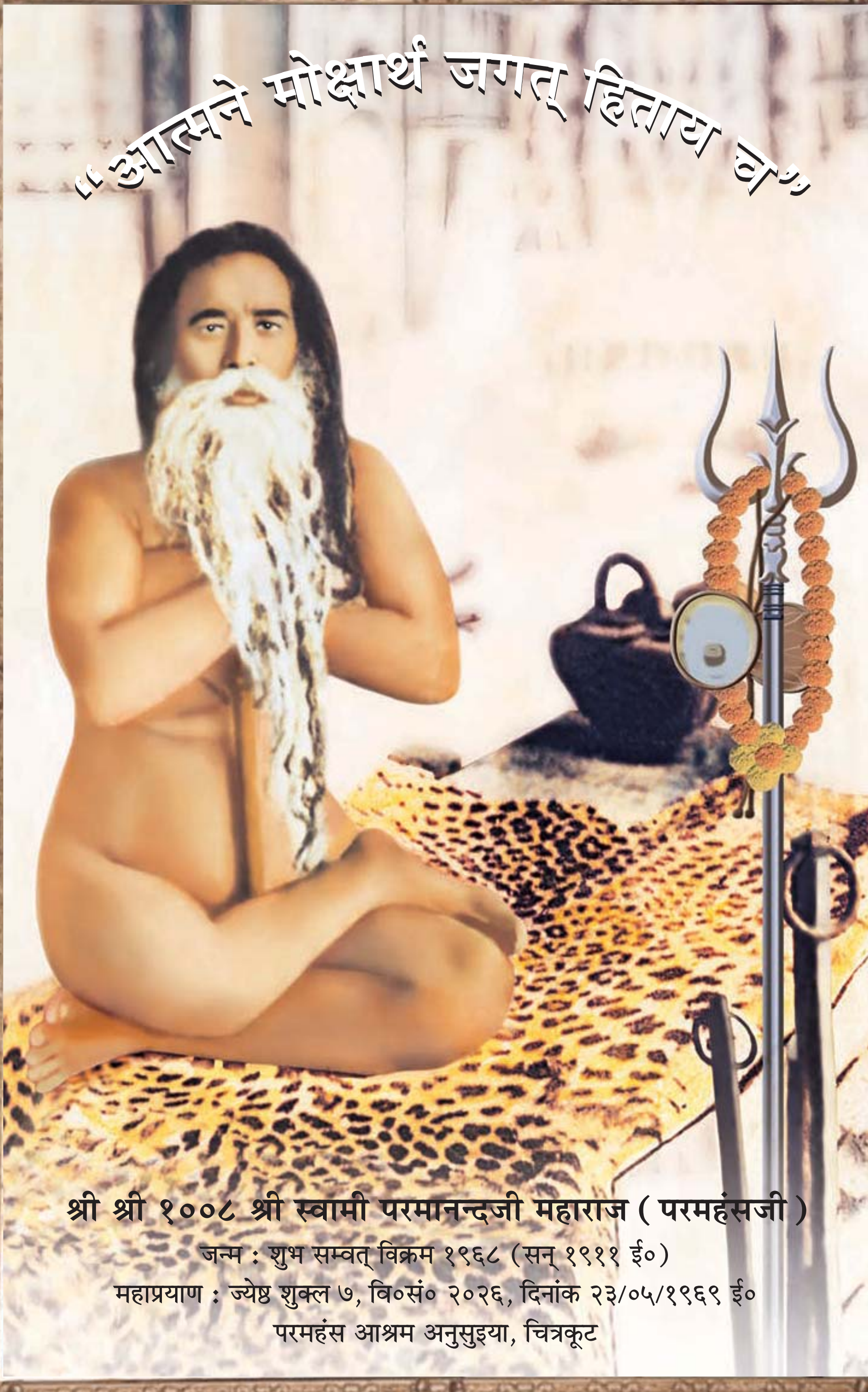

श्री श्री १००८ श्री स्वामी परमानन्दजी महाराज (परमहंसजी)

जन्म : शुभ सम्वत् विक्रम १९६८ (सन् १९११ ई०)

महाप्रयाण : ज्येष्ठ शुक्ल ७, वि०सं० २०२६, दिनांक २३/०५/१९६९ ई०

परमहंस आश्रम अनुसुइया, चित्रकूट

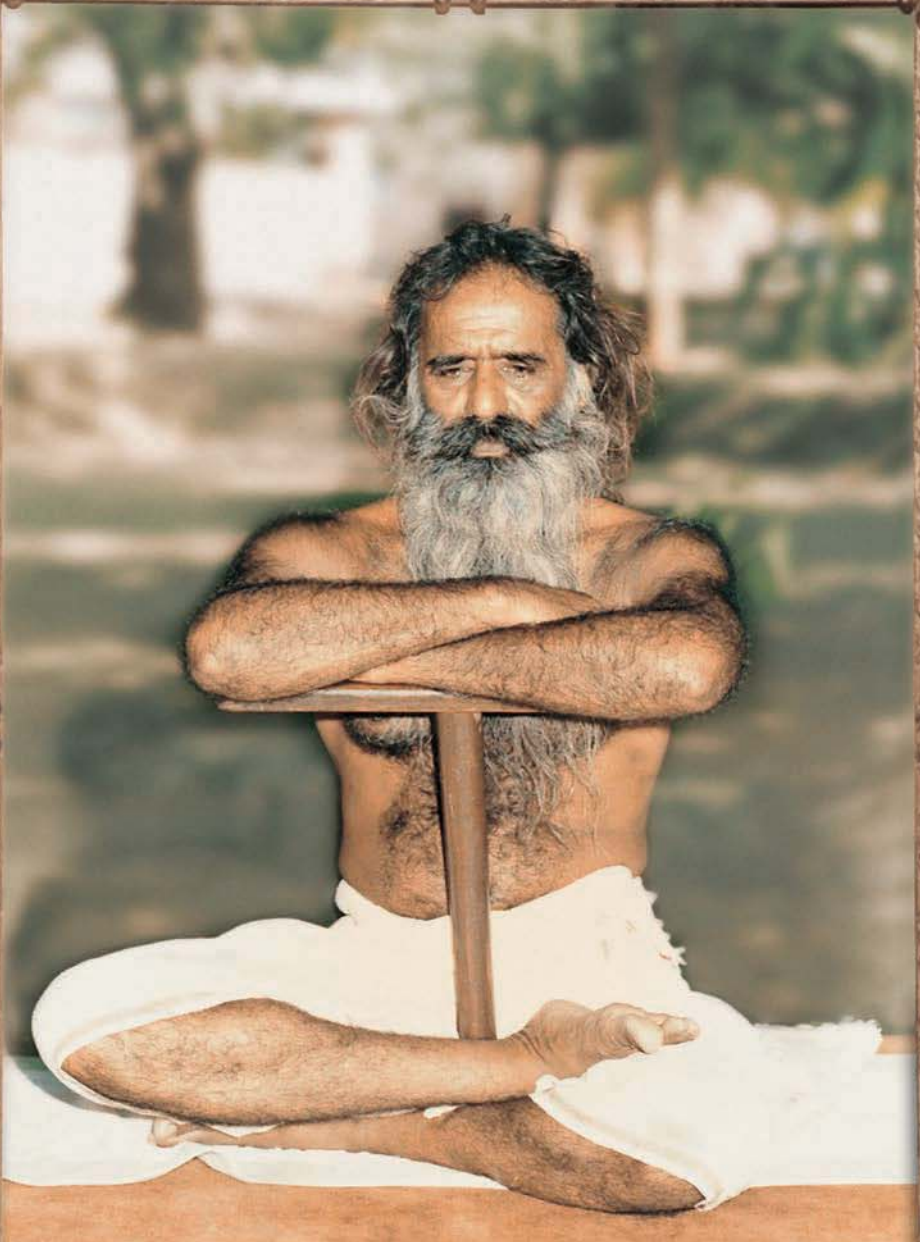

श्री स्वामी अड़गड़ानन्दजी महाराज

(परमहंस महाराज का कृपा-प्रसाद)

विषय-सूची

क्रम	*विषय*	*पृष्ठांक*
१.	बालि-वध	३
२.	शूर्पणखा-विरूपण	७
३.	सीता-परित्याग	१२
४.	शम्बूक-प्रकरण	२२
५.	रुक्मिणी-प्रसंग	२६
६.	चीर-हरण	३०
७.	पूतना-वध	३२

राम और कृष्ण
मर्यादा के दृष्टिकोण

राम देखि सुनि चरित तुम्हारे।
जड़ मोहहिं बुध होहिं सुखारे।। *(मानस, २/१२६/७)*

यतिचक्र चूड़ामणि गोस्वामी तुलसीदासजी द्वारा विरचित श्रीरामचरितमानस के अनुसार आदिकवि बाल्मिकी का उद्घोष है- राम! आपका चरित्र देख-सुनकर प्रबुद्धजन हर्षित हो जाते हैं किन्तु उसी चरित्र को देख-सुनकर जड़ व्यक्ति मोह को प्राप्त होते हैं। इतना ही नहीं, भगवान का रहस्यमय चरित्र मुनिजनों को भी भ्रम में डाल देता है-

निर्गुन रूप सुलभ अति, सगुन जान नहिं कोइ।
सुगम अगम नाना चरित, सुनि मुनि मन भ्रम होइ।। *(मानस, ७/७३ ख)*

अस्तु सामान्यजन भगवत्‌चरित्र पर टीका-टिप्पणी करें तो आश्चर्य ही क्या? मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान श्रीराम तथा लीला पुरुषोत्तम भगवान श्रीकृष्ण भारतीय अध्यात्म तथा संस्कृति के युगपुरुष हैं जिनका ज्योतिर्मय व्यक्तित्व एवं कृतित्व अनन्तकालपर्यन्त जनजीवन को आलोकित करता रहेगा; किन्तु सामाजिक, राजनीतिक तथा आर्थिक परिस्थितियों से उत्पीड़ित जन दुर्व्यवस्था को इन महापुरुषों के नाम से प्रवर्तित किया जाता देख अज्ञान एवं आक्रोशवश इन चरित्रनायकों के व्यक्तित्व का ही छिद्रान्वेषण करने लग जाते हैं। भगवान का लोकरंजक स्वरूप उन्हें आकर्षित नहीं कर पाता। उनका आक्षेप है कि वृक्ष-पार्श्व में छिपकर बालि का वध करनेवाले, अनुज लक्ष्मण से शूर्पणखा को विरूपित करानेवाले, अग्नि-परीक्षिता सीता का परित्याग करनेवाले तथा तपस्यारत शूद्र शम्बूक के हत्यारे राम को वे अपना आराध्य नहीं मान सकते। इसी प्रकार पूतना नामक नारी के हत्यारे, बृजांगनाओं का चीरहरण कर उन्हें

नग्नता के लिए विवश करनेवाले, रुक्मिणी इत्यादि पत्नियों के होते हुए भी राधा के साथ रमण करनेवाले कृष्ण उनके आदर्श नहीं हो सकते।

आश्रमीय प्रकाशनों, विशेषतः 'अनछुए प्रश्न' नामक पुस्तिका में भगवान श्रीराम का इतिहास, सीता-परित्याग, शम्बूक तथा 'द्रविड़ और आर्य' प्रकरण में बालि और शूर्पणखा-प्रसंगों की चर्चा है। उन सबकी समग्र पुनरावृत्ति न कर उक्त आक्षेपों पर समासतः विचार अपेक्षित है।

भगवान श्रीराम का चरित्र लाखों वर्षों से जनमानस को अनुप्राणित करता रहा है। आदिकवि से लेकर अद्यावधि रामकथा पर लेखन चलता रहा है- '**नाना भाँति राम अवतारा। रामायन सत कोटि अपारा।।**' ***(मानस, १/३२/६)***- सौ करोड़ और इससे भी अधिक - अपार रामायण। टेलीविजन पर रामायण सीरियल प्रसारित करनेवालों ने कम्ब रामायण इत्यादि सात-आठ रामायणों से उद्धरण लिया। रामायण मूलतः भगवान शिव के हृदय की उपज है- '**रचि महेस निज मानस राखा। पाइ सुसमउ सिवा सन भाखा।।**' ***(मानस, १/३४/११)*** सीताहरण के पश्चात् भगवान राम का दर्शन कर शंकरजी ने मस्तक टेककर उन्हें प्रणाम किया। कुसमय जानकर उनके समीप नहीं गये। उनके इस व्यवहार से उनकी अर्धांगिनी सती चिन्ता में पड़ गई कि यत्र-तत्र अपनी नारी की खोज में भटकनेवाला भगवान कैसे हो सकता है? जबकि उन्हीं राम की कथा वे महर्षि अगस्त्य से सुनकर आ रहे हैं। भगवान शिव ने ही महर्षि को रामकथा सुनाई थी। अपने शिष्यों की जानकारी कैसी है? इसकी जानकारी लेते हुए भगवान भोलेनाथ आगे बढ़ रहे थे। सती को संदेह हुआ जिसके निवारण का उपक्रम रामकथा के ही माध्यम से भगवान शिव को करना पड़ा।

❑ ❑ ❑

बालि-वध

कुछ ऐसी ही शंका उनलोगों को भी है जो कहते हैं कि वृक्ष की ओट में छिपकर बालि का वध करनेवाले राम भगवान नहीं हो सकते, आराध्य नहीं हो सकते। उनका चिन्तन है कि किष्किन्धा-नरेश बालि ने राम के प्रति कोई अपराध नहीं किया था। राम द्वारा उसका वध उन्हें अन्याय प्रतीत होता है किन्तु उनका यह चिन्तन तथ्यों से परे है; क्योंकि यह सर्वमान्य सिद्धान्त है कि ईश्वर की भक्ति से हीन व्यक्ति मानव होते हुए भी पशुतुल्य होता है।

रामचन्द्र के भजन बिनु, जो चह पद निर्बान।
ग्यानवन्त अपि सो नर, पसु बिनु पूँछ बिषान।। *(मानस, ७/७८ क)*

राम - एक परमात्मा के भजन के बिना जो कल्याण चाहता है वह बिना सींग, पूँछ का पशु है। उसमें और पशु में कोई अन्तर नहीं है। मानव भी पशुतुल्य होता है। '**बिषय बस्य सुर नर मुनि स्वामी। मैं पाँवर पसु अति कामी।।**' *(मानस, ४/२०/३)* - सुग्रीव ने कहा- मैं पामर हूँ, पशु हूँ, कामी हूँ। '**बिषय मोर हरि लीन्हेउ ग्याना।**' *(मानस, ४/१८/३)*- विषयों ने मेरा ज्ञान हर लिया।

इसी प्रकार बालि भी था। रावण को बगल में दबाकर घूमनेवाला बालि अन्त में इतना मदान्ध हो गया कि कोई हमारा क्या कर लेगा? वह सामाजिक मर्यादाओं का उल्लंघन करने लगा। जब भगवान ने उसे बाण मारा, उसने भी आरोप लगाया कि आपने मुझे छिपकर क्यों मारा? मेरी दृष्टिपथ में पड़ जाते तो दो ही घड़ी में मैं आपको यमलोक पहुँचा देता। आपने किस मर्यादा का पालन किया?

भगवान ने बताया- '**अनुज बधू भगिनी सुत चारी। सुनु सठ कन्या सम ए चारी।।**' - छोटे भाई की स्त्री, बहन, पुत्र की स्त्री और कन्या- ये

चारों समान हैं। **'इन्हहि कुदृष्टि बिलोकइ जोई। ताहि बधें कछु पाप न होई।।'** *(मानस, ४/८/७)* उनका वध करने में कोई पाप नहीं होता, ऐसे दुष्टों का अन्त करना ही पुण्य है। तुमने मदान्ध होकर मर्यादा का उल्लंघन किया, तुम पापी हो। दूसरे तुम पशु हो, मानवता का त्यागकर पशुवत् जीवन जी रहे हो। पशुओं को छिपकर ही मारा जाता है। तुम्हारी पशुता का बोध कराने के लिए मुझे ओट लेना पड़ा।

अन्ततः बालि ने समर्पण किया, बोला- **'प्रभु अजहूँ मैं पापी, अन्तकाल गति तोरि।'** *(मानस, ४/९)*- आपकी शरण पाकर मैं अब भी पापी ही हूँ? क्षमा माँग लिया। भगवान ने करुणार्द्र हो कहा- **'अचल करौं तनु राखहु प्राना।'** *(मानस, ४/९/२)*

प्रभु राम में यह क्षमता थी कि स्पर्शमात्र से शरीर अक्षत कर देते थे। प्रथम मल्लयुद्ध में बालि के प्रहारों से आहत सुग्रीव का स्पर्श कर उन्होंने उसके शरीर में भी शक्ति-सम्पात किया था- **'कर परसा सुग्रीव सरीरा। तनु भा कुलिस गई सब पीरा।।'** *(मानस, ४/७/६)* श्रीराम ने ऐसा ही प्रस्ताव बालि के समक्ष भी रखा किन्तु उसने स्वीकार नहीं किया। उसने कहा- भगवन्! मुझे देहाभिमानी समझकर ही आप ऐसा कह रहे हैं। एक दिन यह शरीर तो अवश्य छूटेगा। क्या उस दिन भी ऐसा सुयोग मिलेगा कि आप दृष्टिगोचर होंगे और आपका वरदहस्त मेरे सिर पर होगा? ईश्वर के परमधाम की प्राप्ति मानव की सर्वोपरि अभिलाषा होती है। मेरी वह अभिलाषा पूर्ण होने जा रही है। पूर्णकाम! आपको छोड़कर आपसे इस नश्वर शरीर की रक्षा कौन चाहेगा?

श्रीरामचरितमानस के बालकाण्ड, अट्ठाइसवें दोहे के पश्चात् छठीं-सातवीं चौपाई में है-

जेहिं अघ बधेउ ब्याध जिमि बाली। फिरि सुकंठ सोइ कीन्हि कुचाली।।
सोइ करतूति बिभीषन केरी। सपनेहुँ सो न राम हियँ हेरी।।

अर्थात् जिस पाप के लिए ब्याध की तरह बालि को मार डाला, वही पाप सुग्रीव ने किया और वही करनी विभीषन की थी; किन्तु **'सपनेहुँ सो न राम हियँ हेरी।'**- स्वप्न में भी हृदय में उस पर ध्यान नहीं दिया क्योंकि उन सबने प्रभु से क्षमा माँग लिया। प्रभु की मान्यता है- **'सनमुख होइ जीव मोहि जबहीं। जन्म कोटि अघ नासहिं तबहीं।।'** *(मानस, ५/४३/२)* जीव ज्योंही मेरी ओर उन्मुख होता है, उसके करोड़ों जन्मों के पाप नष्ट हो जाते हैं। सृष्टि का ऐसा कोई पाप नहीं है जो प्रभु की ओर, एक राम की ओर उन्मुख होने पर समाप्त न हो जाय। यह थोड़ी देर का किया हुआ क्षणिक पाप, वर्ष दो वर्ष का पाप किस गणना में है? सुग्रीव ने भूल की, बालि ने वही किया, वही विभीषण ने किया - तीनों का अपराध एक जैसा, तीनों ने क्षमा माँगी। भगवान ने तीनों को क्षमा कर दिया। पापी को दण्ड ही दिया जाता है, दिया जाना भी चाहिए किन्तु सज्जन को दण्ड देना न्याय के विरुद्ध है। पाप शरीर नहीं, वृत्तियों में प्रवाहित स्वभाव होता है। पापों के लिए जिन-जिन ने क्षमा माँग ली, जिनसे भविष्य में पाप की सम्भावना नहीं है, ऐसे पुरुषों को दण्ड देना सत्पुरुष को दण्ड देना है। इसलिए जिन-जिन ने क्षमा माँग ली, भगवान राम ने उन सबको क्षमा कर दिया और उन्हें वही स्थान दिया जो एक सज्जन को दिया जाना चाहिए। **'रहति न प्रभु चित चूक किये की। करत सुरति सय बार हिए की।।'** *(मानस, १/२८/५)* किन्तु बालि संसार की नश्वरता को समझ चुका था इसलिए उसने मोक्ष का ही वरण किया। यह थी श्रीराम की न्यायप्रियता।

श्रीराम ने बुजदिल और कायर सुग्रीव को रावण से युद्ध करने योग्य बना दिया। सीता की खोज में भगवान राम ऋष्यमूक पर्वत की तलहटी में पहुँचे तो अनेक पहरेदारों के मध्य रहनेवाले सुग्रीव की ही दृष्टि श्रीराम पर सबसे पहले पड़ी। वह सबसे अधिक सतर्क था क्योंकि उसे मृत्यु का भय था, कहीं बालि आ न जाय अथवा किसी को भेज न दे। उसने कहा- हनुमान! शीघ्र जाओ। दो शूरवीर धनुर्धर इधर आ रहे हैं। संकेत कर देना, मैं भाग

जाऊँगा। विचारणीय है कि सुग्रीव पूर्वनरेश है, सेना भी रही होगी। जामवन्त-जैसे महान् बुद्धिमान मंत्री, हनुमान-जैसे पराक्रमी सेनानायक के होते हुए भी पराक्रम इतना कि 'संकेत कर देना, मैं भाग जाऊँगा।' ऐसे पलायनवादी भीरु मनोवृत्ति के व्यक्ति को भगवान ने वीरता का विधिवत प्रशिक्षण दिया। बालि से एक बार घायल होने पर वह पुनः लड़ा। उसके हृदय में प्रसुप्त पराक्रम जागृत हो गया और जब वह लंका पहुँचा तो त्रैलोक्य विजयी रावण को भी उसने ललकार दिया। सुग्रीव से युद्ध में पार पाता न देख रावण छल, बल और माया का प्रयोग करने लगा। विकल होकर सुग्रीव राम के पास चला आया। राम ने कहा- सखे! आपने इतनी बड़ी भूल कैसे कर दी कि व्यूह से अकेले निकल पड़े और रावण तक पहुँच गये? सुग्रीव ने कहा- प्रभो! माता सीता का अपहरण करनेवाले उस दुष्ट को देखते ही मैं अपने को रोक नहीं पाया। भगवान ने उसे शान्त करते हुए समझाया- वह मायावी है, अतः केवल बल का ही नहीं अपितु बुद्धि-कौशल का भी प्रयोग करना होगा। आपको व्यूहबद्ध होकर चलना चाहिए। इस प्रकार राम का लक्ष्य सुग्रीव को शौर्यसम्पन्न बनाना था, बालि को उसकी पशुता का बोध कराना था, विभीषण के माध्यम से शरणागत की रक्षा का बोध कराना था। किसी को मारना राम का अभीष्ट नहीं था।

❒ ❒ ❒

शूर्पणखा-विरूपण

कतिपय लोगों का आक्षेप है कि जिनके भाई लक्ष्मण ने शूर्पणखा, एक नारी का नाक-कान काट डाला, उन्हें हम अपना आराध्य नहीं मान सकते। इस प्रकरण में भी सर्वप्रथम यह देखना है कि शूर्पणखा कौन थी? श्री रामचरितमानस में सन्तकवि गोस्वामी तुलसीदासजी ने उसका परिचय दिया है-

सूपनखा रावण कै बहिनी।
दुष्ट हृदय दारुन जस अहिनी।। *(मानस, ३/१६/३)*

शूर्पणखा नामक रावण की एक बहन थी जो नागिन के समान भयंकर और दुष्टहृदया थी। वह जहाँ भी गयी उसको डस लिया। '***सुधा सराहिअ अमरताँ, गरल सराहिअ मीचु।' (मानस, १/५)*** अमृत की सराहना जीवन देने के लिए तथा विष की सराहना मृत्यु प्रदान करने के लिए की जाती है। अस्तु नागिन की तरह ही उसका कीर्तिमान था।

शूर्पणखा का पति युद्ध में रावण के द्वारा मारा गया। आक्रोशित शूर्पणखा रावण को उपालम्भ देने लगी- ''तू मेरा भाई है कि शत्रु, तुमने तो मेरे पति को ही मार डाला। अब लोग मुझे विधवा कहेंगे।'' रावण ने सांत्वना दी- ''बहन! युद्ध के उन्माद में मैं पहचान नहीं पाया इसलिए वह मेरे हाथों मारा गया। तुम चिन्ता न करो। हमारी जाति में भी कभी विधवा-सधवा होती है क्या? हजारों स्त्रियाँ हम रखते हैं, पुरुषों के प्रति वैसा ही व्यवहार करने के लिए तुम स्वतन्त्र हो। भाई खर-दूषण के संरक्षण में रहकर जनस्थान में मनचाहा विचरण करो।''

दक्षिण भारत में खर-दूषणादिकों की चौकियाँ इसलिए थीं कि संस्कृति-संवाहक तपस्यारत ऋषि-मुनियों की तपस्या बन्द कराओ और उन्हें खा जाओ। सुररिपु, दुर्मुख, मनुज अहारी इनकी उपलब्धियाँ थीं। सरभंग आश्रम के आगे बढ़ने पर '**अस्थि समूह देखि रघुराया। पूछी मुनिन्ह लागि अति**

दाया।।' *(मानस, ३/८/६)*- हड्डियों का ढेर देखकर राम को बड़ी दया आई। ऋषियों से ज्ञात हुआ- **'निसिचर निकर सकल मुनि खाये। सुनि रघुबीर नयन जल छाये।।'***(मानस, ३/८/८)*- ऋषियों का रक्तपान करनेवाले निशाचर, उनकी टुकड़ी का नायक खर और उनके संरक्षण में स्वच्छन्द विचरण करनेवाली मनचली राक्षसी शूर्पणखा स्वभाव से ही दुष्टा थी।

वाल्मीकि-रामायण का प्रसंग है। चित्रकूट में निवासकाल में ऋषियों का एक समूह राम की ओर कनखियों से संकेत करते हुए आपस में विचार-विमर्श कर रहा था। राम ने कहा- लक्ष्मण! प्रतीत होता है ये ऋषिगण हमलोगों से दुःखी हैं। इनसे क्षमायाचना करनी चाहिए। राम ने कहा- ऋषिवरो! सीता मेरी सेवा में रहती है, उससे कोई भूल हो सकती है। कदाचित् उसने समय से आपको भिक्षा न दी हो, अनुज लक्ष्मण अभी बालक है उसकी बुद्धि परिपक्व नहीं है, उससे भी भूल हो सकती है अथवा मुझसे ही कोई भूल हुई हो तो क्षमा करें।

ऋषियों ने कहा- नहीं राम! तुमसे कभी भूल हो ही नहीं सकती और न लक्ष्मण या देवी सीता से ही कोई भूल हुई है। आपलोगों का यहाँ चित्रकूट में रुकना ही हमलोगों के उद्वेग का कारण है। राक्षस खर ने आपका यहाँ आगमन सुन लिया है। वह ऋषियों का वध करते, उनकी अँतड़ियों को क्षत-विक्षत करते यहाँ चला आ रहा है। यहाँ वह हमलोगों का शरीर क्षत-विक्षत करे, इससे पूर्व ही हमलोग इस स्थान को छोड़कर अन्यत्र जाना चाहते हैं। राम! आप इन निशाचरों का वध करने में सक्षम हैं किन्तु सीता के साथ रहने पर आप भी उन्हें मार नहीं पायेंगे। इसलिए आप भी हमलोगों के साथ ही चलें। वहाँ अच्छा जलाशय है, कन्दमूल फल की प्रचुर मात्रा है, हमलोग वहाँ आपकी सेवा करेंगे। इस प्रकार ऋषिवृन्द इन राक्षसों के आतंक से पलायन करते ही रहते थे। हाँ, उन बीहड़ अरण्य में कुछ तपोधन ऐसे भी थे जिन पर इन निशाचरों का प्रभाव काम ही नहीं करता था; जैसे- महर्षि अत्रि, सरभंग, अगस्त्य इत्यादि।

स्वच्छन्द विचरण के ही क्रम में शूर्पणखा एक बार पंचवटी की ओर आई- '**पंचबटी सो गइ एक बारा। देखि बिकल भइ जुगल कुमारा।।**' *(मानस, ३/१६/४)*- उसने राम और लक्ष्मण को देखा तो विकल हो गयी। '**भ्राता पिता पुत्र उरगारी। पुरुष मनोहर निरखत नारी।। होइ बिकल सक मनहि न रोकी। जिमि रबिमनि द्रव रबिहिं बिलोकी।।**' *(मानस, ३/१६/५-६)*- आसुरी स्वभाववाली नारियाँ भाई को भाई नहीं समझतीं, पिता को पिता नहीं समझतीं, पुत्र को पुत्र नहीं मानतीं। मन में विकार आने पर वे इन पवित्र मर्यादित सम्बन्धों के स्थान पर पुरुष-भाव से देखने लगती हैं। इसलिए वह '**रुचिर रूप धरि प्रभु पहिं जाई। बोली बचन बहुत मुसुकाई।।**' *(मानस, ३/१६/७)*- सुन्दर रूप धारण कर प्रभु के पास पहुँच गयी, मुस्कराकर बोली- आप जैसा सौन्दर्यसम्पन्न पुरुष और मेरे समान नारी सृष्टि में कहीं है ही नहीं। मैंने आपने अनुरूप योग्य वर तीनों लोकों में खोजा किन्तु कोई पसन्द नहीं आया इसलिए मैं आज तक अविवाहित रही। '**मन माना कछु तुम्हहि निहारी।**' *(मानस, ३/१६/१०)*- आपको देखकर मेरा मन थोड़ा-बहुत मान गया है। जन्म हुआ है तो जीना ही पड़ेगा। आप हमसे अधिक सुन्दर नहीं है किन्तु काम चल जायेगा। थी तो राक्षसी किन्तु परिचय दिया सौन्दर्य-सम्पन्नता का।

सीता की ओर दृष्टि-निक्षेप कर भगवान राम ने कहा- यह मेरा छोटा भाई लक्ष्मण भी राजकुमार है। तब वह लक्ष्मण के समीप गयी। लक्ष्मण ने कहा- सुन्दरी! यह मेरे अग्रज हैं, स्वामी हैं, मैं इनके चरणों का दास हूँ। सेविका बनने में तुम्हें कौन-सा सुख मिलेगा? लक्ष्मण की ओर से हताश शूर्पणखा राम की ओर उन्मुख हुई। प्रभु ने कहा- मेरा विवाह तो हो चुका है। देखो, यह मेरी पत्नी है। उसने कहा- असहमति का कारण यह है तो चलो उसी को खा डालती हूँ। फिर तो ब्याह करेंगे। उसका आक्रामक तेवर देखते ही राम ने संकेत किया, लक्ष्मण ने उसे विरूपित कर दिया। नाक-कान में खरोंच लगते ही वह छद्मवेश भूलकर वास्तविकता में आ गयी। वह राक्षसी

दहाड़ने लगी। भ्राता खर-दूषण को प्रोत्साहित किया। वे सब मारे गये। अन्ततः वह रावण के पास पहुँची, कहा- '**करसि पान सोवसि दिनु राती। सुधि नहिं तव सिर पर आराती।।**' *(मानस, ३/२०/७)*- तू मदिरा पीकर सोया है। तुझे ज्ञात नहीं है कि तुम्हारी सीमा पर शत्रु ने कदम रख दिया है। रावण ने कहा- तू अपनी बात तो बता, वहाँ तू गयी किसलिए थी? गयी तो थी अपना ब्याह करने; किन्तु भाई को बताया कि तुम्हारे लिए परम सुन्दरी नारी लाने गयी थी। उसने पूरी लंका का सर्वनाश करा दिया। वह राम को छलने आयी थी। करोड़ों निशाचरों का सर्वनाश करानेवाली शूर्पणखा क्या अबला थी?

पत्नी की रक्षा करना पति का दायित्व है। राम ने उस दायित्व का निर्वाह किया। शूर्पणखा को अपने रूप-सौन्दर्य का बहुत गर्व था। राम ने उसका वास्तविक स्वरूप उद्घाटित कर दिया। अहिनी थी और अहिनी हो गयी। झूठ-सच बोलकर सम्पूर्ण लंका को खा गयी। जिनके ऊपर वह झपट पड़ी थी, उन सीताजी का तो कोई दोष ही नहीं था। वह तो पतिव्रत धर्म का निर्वाह करते हुए पति के साथ कंटकाकीर्ण पथ पर चल रही थी। हर नारी का यही कर्त्तव्य है। पति यदि दिव्य प्रासाद में रहता है तो वहाँ सेवा करे। कदाचित् दुर्योग से युधिष्ठिर या राम की तरह वनवास मिल गया तब भी कंधे से कंधा मिलाकर चले। पति की दशा में सन्तुष्ट रहना, उनका सहयोग करना, उनके अधूरे कार्यों को पूर्ण करना पतिव्रत है। नारियों का उत्कर्ष-अपकर्ष सामाजिक व्यवस्था की देन है; भगवान के यहाँ दोनों बराबर हैं-

पुरुष नपुंसक नारि वा, जीव चराचर कोइ।
सर्ब भाव भज कपट तजि, मोहि परम प्रिय सोइ।। *(मानस, ७/८७ ख)*

भगवान शिव अर्द्धनारीश्वर कहे जाते हैं। आधा नारी और आधा पुरुष बनकर परब्रह्म परमात्मा की सृष्टि में उत्पत्ति, पालन और परिवर्तन चलता ही रहता है। नारी और पुरुष सृष्टि में समान सहयोगी हैं। असुरों से पराभूत देवताओं को एक नारी ने ही विजय दिलायी थी, वह भी युद्ध करके। ताड़का

नारी ही थी। उसमें एक हजार हाथियों का बल था। इन्द्र का बसाया हुआ करुष देश उसने उजाड़कर उसे जंगल बना दिया था। उसके पुत्र मारीच और सुबाहु भी पराक्रमी थे। नारी सृष्टि में द्वितीय श्रेणी की नागरिक कभी न थी। हाँ, समय-समय पर इन पर आपदायें आयीं। कभी इनकी सुरक्षा के लिए पर्दा-प्रथा का प्रचलन हुआ, छीना-झपटी होने पर 'नारी अवध्य है', 'रक्षणीय है' जैसे आन्दोलनों का सूत्रपात हुआ। सम्प्रति समान अधिकार का आन्दोलन 'फूट डालो और राज्य करो' की मनोवृत्ति मात्र है। मानवीय मर्यादा के अनुसार गृहस्थी का दायित्व नारियों का है, अर्जन पुरुषों का। गृह-विभाग और संग्रह-विभाग के रूप में कार्य-विभाजन पूर्वजों द्वारा नियत मर्यादा है।

एक बार विद्वान लोगों ने भगवान राम के समक्ष यज्ञ करने का प्रस्ताव रखा। भगवान राम ने स्वीकृति दे दी। विद्वानों ने कहा- फिर तो आपको विवाह करना होगा क्योंकि नारी के बिना यज्ञ सम्पन्न नहीं होता। यह उस समय का प्रस्ताव था जब सीता बाल्मीकि आश्रम में थीं। एक पत्नीव्रत राम का आदर्श था। उन्होंने कहा- यदि ऐसा है तो मुझे यज्ञ नहीं करना है। विद्वानों ने उपाय बताया- सीता की सुवर्ण प्रतिमा बनाकर यज्ञ सम्पन्न हो सकता है। इस प्रकार पुष्कल, दान-दक्षिणा के साथ वह यज्ञ सम्पन्न हुआ किन्तु राम एक पत्नीव्रत ही रहे। यह पतिव्रत और पत्नीव्रत जैसी मर्यादायें स्त्री-पुरुष दोनों के लिए श्रीराम ने स्थापित किया जो तब भी उचित था और आज भी है।

❒ ❒ ❒

सीता-परित्याग

महारानी सीता के परित्याग का लांछन भी भगवान श्रीराम पर आरोपित किया जाता है किन्तु वस्तुतः वह राम के राजनीतिक रंचमंच का एक परिदृश्य मात्र था। इसे हृदयंगम करने के लिए राजनीति विशारद रावण के जीवन की एक झाँकी प्रस्तुत है। युद्ध में आहत रावण की ओर संकेत कर भगवान राम ने कहा- लक्ष्मण! रावण महान राजनीतिज्ञ है, उससे तुम राजनीति की शिक्षा ग्रहण करो। लक्ष्मण ने कहा- भैया! रावण और राजनीतिज्ञ! एक नारी के व्यामोह में पड़कर उसने अपने वंश का मूलोच्छेद करा डाला, स्वर्णिम लंका को धूल में मिला दिया। यदि उसे राजनीति का कुछ भी भान होता तो इस सर्वनाश से बचने-बचाने का उपक्रम किया होता- '**अरध तजहिं बुध सरबस जाता।**' *(मानस, २/२५५/२)*

राम ने कहा- नहीं लक्ष्मण! ऐसी बात नहीं है। तुम उसके पास जाओ। लक्ष्मण गये, रावण के सिर की ओर खड़े होकर बोले- महान सम्राट! मैं राम का अनुज लक्ष्मण आपसे राजनीति की शिक्षा लेना चाहता हूँ। रावण ने आँख ही नहीं खोली। लक्ष्मण लौट आये, बोले- भैया! अब वह अगले जन्म में ही कहीं बोल सकेगा। उसके मुँह में मक्खियाँ आ-जा रही हैं। उसे होश भी है कि राजनीति ही पढ़ायेगा। राम ने समझाया- नहीं लक्ष्मण! ऐसी बात नहीं है। तुम खड़े कहाँ थे? लक्ष्मण ने बताया- उसके शिर की ओर। राम ने कहा- शिक्षा लेने के लिए गुरु के श्रीचरणों में प्रणिपात करो, निवेदन करो। लक्ष्मण गये, सादर प्रणाम कर बोले- सम्राट! मैं राम का छोटा भाई लक्ष्मण आपसे राजनीति की शिक्षा लेने आया हूँ। इतना सुनते ही रावण एक झटके में उठा, लक्ष्मण का धनुष और तरकश छीन लिया। चकित लक्ष्मण कुछ कर पाते, इसके पूर्व ही रावण बाण का अनुसंधान कर, लक्ष्मण के गले का लक्ष्य लेकर, प्रत्यंचा खींचकर बोला- देख! राम का भाई है इसलिए जीवित छोड़ता हूँ। लक्ष्मण! राजनीति की पहली शिक्षा तो यह है कि शत्रु चाहे मरणासन्न हो अथवा मर ही क्यों न गया हो, उसके पास जाना है तो सदैव सावधान मुद्रा

में जाओ। चमत्कृत लक्ष्मण ने व्यंग्य किया- उपदेश तो आप अच्छा कर लेते हैं किन्तु नीति का पालन आपसे नहीं हो सका। एक स्त्री के व्यामोह में अपने वंश का मूलोच्छेद करवा डाला।

रावण ने समाधान किया- नहीं लक्ष्मण! यह तुम्हारी भूल है। वंश की रक्षा के लिए ही मैंने विभीषण को राम की शरण में जाने को विवश कर दिया था। लक्ष्मण ने कहा- क्या लातों से मारकर भेजने का अच्छा तरीका था? रावण ने कहा- नहीं लक्ष्मण! यदि मैं प्रेम से भेजता तब यह रहस्य कुछ लोग जान जाते। मेरा अभीष्ट पूर्ण न होता। राजनीति का नियम है कि योजना किसी पर भी प्रकट न हो। वह न समझ में आये और उसके द्वारा जो सिद्ध होनेवाला कार्य है वह सामने दिखाई पड़े। इसीलिए मैंने विभीषण को प्रताड़ित कर निष्कासित किया। मैं उसे बन्दीगृह में भी तो डाल सकता था।

लक्ष्मण ने कहा- चलिये, मान भी लेते हैं कि वंश-सुरक्षा के लिए आपने अपनी योजनान्तर्गत ही भेजा था तो कल विभीषण पर मरणान्तक शक्ति का प्रहार क्यों किया? रावण ने कहा- लक्ष्मण! मुझे संदेह था कि राम मेरे वंश की रक्षा कर पायेंगे या नहीं, इसी की परीक्षा के लिए मैंने शक्ति का प्रहार किया। रामजी ने अपने वक्षस्थल पर उस शक्ति को झेल लिया। इससे मैं आश्वस्त हो गया कि अब मेरा वंश सुरक्षित है। लक्ष्मण! मेरे द्वारा पहले किये गये युद्ध तथा शक्ति-प्रहार के पश्चात् किये गये युद्ध-कौशल में अन्तर तो तुमने देखा होगा। लक्ष्मण ने कहा- हाँ राजन्! शक्ति-प्रहार के पश्चात् का संग्राम देखकर संदेह होने लगा था कि कदाचित् आप मरेंगे ही नहीं। रावण ने कहा- उसका यही कारण था कि मेरा वंश सुरक्षित हो गया था। इसीलिए जितने भी दिव्यास्त्र मैंने छिपा रखे थे, वह सब उलेड़ दिया। मैं जानता था कि रामजी का तो कुछ बिगड़नेवाला नहीं है। व्यर्थ ही इतने अस्त्र-शस्त्रों का संग्रह क्या होगा? लोग देख तो लें कि रावण कितना पराक्रमी है, दिव्यास्त्रों का ज्ञाता है। राम से युद्ध का निर्णय तो मैंने शूर्पणखा की सूचना से ही कर लिया था-

खर दूषन मोहिं सम बलवन्ता। तिन्हहि को मारइ बिनु भगवंता।।
सुर रंजन भंजन महि भारा। जौं भगवंत लीन्ह अवतारा।।
तौ मैं जाइ बयरु हठि करऊँ। प्रभु सर प्रान तजें भव तरऊँ।।
(मानस, ३/२२/२-४)

सुर, नर, असुर अथवा नागों में ऐसा कोई नहीं है जो मेरे सेवक से भी विरोध करने का साहस कर सके। फिर खर-दूषण तो मेरे समान ही बलवान थे। भगवान के अतिरिक्त उनका वध करने में कौन समर्थ है? देवताओं को आनन्द देनेवाले प्रभु ने ही यदि अवतार ले लिया है तो मैं हठपूर्वक उनसे बैर करूँगा और उन्हीं के बाणों से प्राणों का त्यागकर भवसागर से पार हो जाऊँगा। शाश्वत धाम पाने का अन्य साधन भजन है किन्तु भजन तो हमलोगों से होगा नहीं- '**होइहि भजनु न तामस देहा। मन क्रम बचन मन्त्र दृढ़ एहा।।**' ***(मानस, ३/२२/५)*** कार्य की गोपनीयता के लिए ही मैं अकेला मारीच के यहाँ गया। मारीच ने भी कहा कि वह भगवान हैं। इससे भी मेरे निश्चय को बल मिला, किन्तु मैंने अपना मनोभाव गुप्त ही रखा। उससे कहा, चलता है कि निकालूँ तलवार! हरण के समय सीता ने भी सावधान किया था-

जिमि हरिबुधहि छुद्र सस चाहा। भएसि काल बस निसिचर नाहा।।
(मानस, ३/२७/१५)

एक छुद्र खरगोश सिंहनी की कामना करे; असुरेश! तुम्हारी भी कामना ऐसी ही है। लगता है तुम्हारी मौत आ गयी है। अभी मार डालेंगे भगवान। '**सुनत बचन दससीस रिसाना। मन महुँ चरन बंदि सुख माना।।**' ***(मानस, ३/२७/१६)***- यह वचन सुनते ही रावण को क्रोध आ गया किन्तु मन में आनन्दित हो रहा था कि सीता भी मेरे निर्णय को पुष्ट कर रही हैं भगवान हैं। रावण को सबने समझाया; विभीषण ने कहा, कुम्भकर्ण ने कहा, माता कैकसी ने कहा, मंत्री माल्यवान ने कहा भगवान हैं। जब-जब किसी ने कहा 'ये भगवान हैं', रावण आगबबूला होने का सफल अभिनय करता था। मानो वह उन्हें भगवान मानता ही नहीं।

लक्ष्मण! लंका के सभी निवासी मेरा अनुसरण करते थे। हमने पाप किया और सबसे कराया। मैंने सोचा- क्यों न प्रभु के धाम का मार्ग सबको सुलभ करा दूँ। इसलिए पुत्र, पौत्र, प्रपौत्र इत्यादि सभी को मैंने राम के बाणों के समक्ष धकेल दिया। मैं ज्योतिष का भी आचार्य हूँ। मुझे ज्ञात था कि आयु के कितने दिन शेष हैं। जाना तो पड़ेगा ही। स्वर्णिम लंका कब तक हमारी रहेगी। इसको तो छूटना ही था। प्रश्न था कि भगवान के धाम जाऊँ या नरक? धाम के लिए हमने मार्ग प्रशस्त कर लिया। लक्ष्मण! तुम धाम आओगे तो वहाँ मैं तुमसे मिलूँगा। यह राजनीति थी लक्ष्मण। न हमने विभीषण का अपमान किया है न माताजी का अपहरण, हमें तो अपने लक्ष्य की सिद्धि करनी थी।

लक्ष्मण ने लौटकर यह वृत्तांत श्रीराम को सुनाया- भैया! वह तो महान् राजनीतिज्ञ निकला। उसने तो माता सीता का हरण किया ही नहीं। उसने तो अपना लक्ष्य पूर्ण कर लिया। भगवान इस रहस्य को जानते थे। उन्हें संदेहयुक्त अपने ऐसे सेवक का भी उद्धार करना ही था।

बाल्यकाल में गुरु वशिष्ठ ने राम को अस्त्र-शस्त्रों का अभ्यास कराया। महर्षि विश्वामित्र ने उन्हें दिव्यास्त्र प्रदान किये। महर्षि अगस्त्य ने उन्हें उन अस्त्रों को दिया जिससे रावण का वध हुआ था। सरभंगजी ने भी उन्हें तलवार प्रदान किया था किन्तु इन सबसे उन्नत स्तर के शस्त्रास्त्र महर्षि बाल्मीकि की संरक्षा में थे। वे महापुरुष किसी सत्पात्र को उन्हें सौंपना भी चाहते थे, कब तक उन दिव्यास्त्रों की सुरक्षा करते। राम इस रहस्य को जानते थे इसीलिए लंका-विजय के उपरान्त अयोध्या आने पर उन्होंने इन दिव्यास्त्रों को पाने की एक योजना बना ली।

राम ने सीता से कहा- सीते! कोई इच्छा हो तो बताओ। सीता ने एक बार पुनः वन देखने की लालसा व्यक्त की। वह शान्ति व सुख जो तपोधन महात्माओं के दर्शन और प्रवचनों में था, फुदकते हुए मृगशावकों एवं चिन्तनशील देवियों में था, वह राजप्रासादों में कहाँ। राम ने आश्वासन दिया

कि वहाँ चलने की तैयारी करें।

प्रजाजनों का समाचार ज्ञात करने के लिए राम के राज्य में गुप्तचर नियुक्त थे। राम ने उनसे प्रजाजनों का सुख-दुःख ज्ञात किया, अपने शासन-प्रबन्ध की जिज्ञासा की। गुप्तचर बोले- सर्वत्र आपकी प्रशंसा हो रही है। लाखों वर्षों की अव्यवस्था को आपने सुशासन में परिवर्तित कर दिया है। संसार में सुख-शान्ति की लहर आ गयी है। राम ने जानना चाहा कि उनके विरोध में भी कहीं कुछ है तो बताया जाय। गुप्तचर ने बताया- एक रजक कह रहा था कि यद्यपि महारानी सीता महासती हैं, अग्नि-परीक्षा में भी उत्तीर्ण हैं फिर भी सिंहासन पर विराजने योग्य नहीं हैं क्योंकि उन्होंने रावण की लंका में निवास किया है। महाराज रघु को कई रानियाँ थी, चक्रवर्ती सम्राट दशरथ की भी कई रानियाँ थीं। सिंहासन की शोभा बढ़ाने के लिए रामजी को एक विवाह और कर लेना चाहिए।

रामजी ने किंचित् उदास होने का अभिनय किया। लक्ष्मण को उन्होंने आदेश दिया कि वह सीता को जंगल में छोड़ आयें। लक्ष्मण ने प्रतिवाद किया कि अग्नि-परीक्षिता जगज्जननी सीता का चरित्र निष्कलंक है। उन्हें जंगल में छोड़ आना मुझसे न होगा। राम ने कहा- यह राजाज्ञा है। आज्ञाकारी लक्ष्मण गंगा के किनारे सीता को रथ से उतार कर रोने लगे। सीता ने कहा- लक्ष्मण! भाई का वियोग सहन नहीं कर पा रहे हो, ऋषियों का दर्शन-पूजन कर हम दो-चार दिनों में लौट चलेंगे; किन्तु लक्ष्मण ने उन्हें वास्तविकता से अवगत कराया। परित्यक्ता सीता ने बहुत विलाप किया। लक्ष्मण लौट गये। करुण-क्रंदन करती, नदी में प्राण देने को उद्यत सीता को महर्षि बाल्मीकि ने आश्रय दिया। उन्हें अपनी कुटिया में ले आये। आश्रम में अन्य देवियाँ भी थीं। उन सबकी देखरेख में सीता रहने लगीं। बाल्मीकि विचार में पड़ गये कि रामायण में अभी और क्या लिखना शेष है? सीता को पुनः वन भेजने में राम का उद्‌देश्य क्या है? वह इस गुत्थी को सुलझाने में लगे थे तब तक सूचना मिली कि सीता ने दो पुत्रों को जन्म दिया है। ऋषि प्रसन्न हो उठे। उन्होंने बच्चों का

नामकरण लव और कुश के रूप में किया और कहा कि अब देख लूँगा लंका की विजयवाहिनी सेना को, देख लूँगा अवध की चतुरंगिणी सेना को। वे लगे लड़कों को पढ़ाने।

बच्चों को शस्त्राभ्यास करते ग्यारह वर्ष व्यतीत हो गये थे। इसी समय भगवान राम के अश्वमेध यज्ञ का घोड़ा बाल्मीकि-आश्रम के समीप आया। बच्चों ने कहा- इस अश्व के गले में संदेश लिखा है। पढ़ने से उन्हें ज्ञात हुआ कि इस अश्व को जो पकड़ेगा या बाँधेगा, उसे युद्ध करना पड़ेगा। लव और कुश बहुत प्रसन्न हुए। इतने दिनों तक हमने अभ्यास किया है, उसकी परीक्षा का अच्छा अवसर मिल गया।

शत्रुघ्न ने बच्चों को समझाया किन्तु बच्चे तो युद्ध के लिए तुले हुए थे। शत्रुघ्न युद्ध में मूर्छित हो गये। संदेश पाने पर भरत, सुग्रीव, विभीषण इत्यादि भी आ गये किन्तु वे लव और कुश को पराजित नहीं कर सके। लक्ष्मण अयोध्या से प्रस्थान कर रहे थे। राम ने कहा- कुछ सेना भी ले लो। लक्ष्मण ने कहा- दो बच्चों के लिए सेना लेकर जाना लक्ष्मण के पराक्रम का अपमान है। मैं अकेला ही पर्याप्त हूँ। लक्ष्मण ने दिव्यास्त्रों का भण्डार उड़ेल दिया किन्तु उन बालकों ने उनके दिव्यास्त्र को कुण्ठित कर दिया। वह भी मूर्च्छित हो गये।

हनुमान ने भी युद्धक्षेत्र का दृश्य देखा। दोनों लड़कों की आकृति में उन्हें भगवान श्रीराम और माता सीता के दर्शन हुए। उन्होंने ध्यान में प्रभु से पूछा कि अप्रतिम तेजस्वी बालक कौन हैं? ध्यान में उन्हें प्रभु राम और सीता की गोद में खेलते हुए दोनों बच्चे दिखाई पड़े। हनुमान मुस्कराने लगे। बच्चों ने हनुमान से उनका परिचय पूछा। हनुमान ने उन्हें अपना नाम बताया। बालकों ने कहा- गुरुजी हमें रामकथा सुनाते हैं। उसमें आपका चरित्र हमलोगों को बहुत प्यारा लगता है; किन्तु यहाँ रावण, कुम्भकरण और मेघनाद से युद्ध नहीं है; लव, कुश से मुकाबला है। उठाइये अपनी गदा! हनुमान मुस्कराने लगे।

कुश ने लव से कहा- भैया! यह बन्दर शरारती लगता है, इसे बाँध दें। बच्चों ने उन्हें लताओं से बाँध दिया। बिना किसी विरोध के हनुमान बैठ गये। बच्चों ने मूँगफली, कन्दमूल फल लाकर रख दिया, बोले- भोग लगाइए। कोई हरकत मत करना। हनुमान ने कहा- निश्चिन्त रहो! थोड़ी मूँगफली और लाओ।

इतने में राम आ गये। उन्होंने कहा- हनुमान! कैसे दुबककर बैठे हो? हनुमान बोले- प्रभु! आज आपकी सहायता नहीं कर सकूँगा। मैं इनका बन्दी जो हूँ। क्यों बच्चो! कुछ कन्दमूल और ले आओ।

राम ने कहा- बच्चो! तुम्हें देखकर हमें दया लग रही है। चाहो तो यह रथ ले लो और उस घोड़े को छोड़ दो। लव ने कहा- कहाँ गया वह रामबाण! लव और कुश से मुकाबला है। उठाइये अपना रामबाण! कोई रास्ता नहीं रह गया। राम ने धनुष की प्रत्यंचा चढ़ाई; तब तक महर्षि बाल्मीकि वहाँ आ पहुँचे, बोले- राम! बच्चों से मचलना आपको शोभा नहीं देता। माना कि राजहठ होता है किन्तु यदि उससे बालहठ टकराये तो राजहठ को पीछे हट जाना चाहिए।

राम ने कहा- आपकी आज्ञा शिरोधार्य है ऋषिप्रवर! किन्तु ये बालक उत्साहित प्रतीत होते हैं। हमें यज्ञ का अश्व दिला दें अन्यथा न यज्ञ पूर्ण हो सकेगा और न राम का यश ही रह पायेगा। महर्षि के कहने पर बालकों ने अश्व को मुक्त कर दिया। उन्होंने पूछा- यह अश्व तुमने क्यों निरुद्ध किया? कुश ने कहा- गुरुदेव! भैया लव को एक प्रश्न रामजी से पूछना था। हमने सोचा, त्रैलोक्य विजयी सम्राट से कैसे भेंट होगी? वहाँ हमें कौन जाने देगा? हमलोगों ने विचार किया कि अश्व बाँध लें। वे छुड़ाने आयेंगे तो उनसे पूछ लेंगे।

राम ने कहा- पूछो! लव ने कहा- जिस सीता ने स्वर्णिम लंका को तिनके के समान समझा, चक्रवर्ती सम्राट के राजसी ऐश्वर्य को तिलांजलि दे

कंटकाकीर्ण पथ पर नंगे पाँव छाया की तरह आपकी अनुगामिनी रही, अग्नि-परीक्षिता सीता का परित्याग मात्र एक धोबी की छींटाकशी करने पर आपने कैसे किया? उनका अपराध क्या था?

राम ने समझाया- बच्चो! वह थी राजनीति। राजनीति के सूत्र अत्यन्त सूक्ष्म होते हैं जिन्हें बड़े होने पर तुम समझोगे। सीता-परित्याग के माध्यम से उन्होंने महर्षि के दिव्यास्त्रों को प्राप्त कर लिया। चक्रवर्ती सम्राट उन शस्त्रों की भिक्षा तो माँग नहीं सकता था। वे दिव्यास्त्र ऋषि के लिए भारस्वरूप हो चुके थे। अकारण भजन छोड़कर उधर ही ध्यान दिया करते थे कि कोई उनका दुरुपयोग न कर ले। वे सारे दिव्यास्त्र उन्हें मिल गये। बच्चों के पालन-पोषण के लिए माँ से श्रेष्ठ संरक्षिका विधाता की सृष्टि में कोई आज तक है ही नहीं। उन्होंने सोचा, सिंहासन की अपेक्षा वन में बच्चों की देखरेख करना सीता के लिए भी अधिक श्रेयस्कर है। देखरेख सीता से हो रही थी और विद्याध्ययन गुरुदेव से। यह थी राम की सूक्ष्म राजनीति। परित्याग तो उन्होंने किया ही नहीं।

इसी प्रकार श्रीकृष्णकालीन एक आख्यान है जिससे भगवान श्रीकृष्ण के राजनीतिक कौशल का परिचय मिलता है। श्रीकृष्ण द्वारा कंस-वध से खिन्न मगध नरेश जरासंध ने पूरब से और कालयवन ने पश्चिम दिशा से मथुरा पर आक्रमण कर दिया। नारदजी ने सूचना दी- कालयवन मथुरा नगरी में प्रविष्ट हो गया है। हलधर ने आवेश में कहा- अभी देखता हूँ। श्रीकृष्ण ने कहा- नहीं दाऊ! नानाश्री जरासंध दल-बल सहित आ रहे हैं, आप उनका स्वागत करें। कालयवन को मैं देख लेता हूँ।

दाऊ ने श्रीकृष्ण को बताया कि उसे शिवजी का वरदान प्राप्त है कि आमने-सामने युद्ध में कोई उसे पराजित नहीं कर सकता है। श्रीकृष्ण ने कहा- दाऊ! आप निश्चिन्त रहें। वह सीधे कालयवन के समक्ष पहुँच गये। कालयवन ने पूछा- यह कौन है? सेवकों ने कहा- ये श्रीकृष्ण हैं। कालयवन ने कहा- जैसा नाम सुना था, वैसा ही पाया। साक्षात् काल कालयवन के

समक्ष आने का तुमने सराहनीय साहस का परिचय दिया है। जाओ, सेना लेकर आओ।

राजन्! जरा-सी ही तो बात है। कालयवन श्रेष्ठ योद्धा है या श्रीकृष्ण- मात्र इतने निर्णय के लिए इस सेना की अकारण हत्या क्यों कराते हैं? हमदोनों परस्पर मल्लयुद्ध करें तो कैसा रहेगा? कालयवन क्रोधान्ध होकर रथ से कूछ पड़ा; वह बोला- तू मुझसे युद्ध करेगा? चल खड़ा हो सामने!

श्रीकृष्ण ने कहा- ऊँहूँ! मैं जब आपका गला दबाऊँगा, आप घिघियायेंगे तो आपके सैनिक आपकी सहायता के लिए आ सकते हैं इसलिए थोड़ा एकान्त में चलते हैं। तू और मेरा गला दबायेगा! चल एकान्त में! आगे श्रीकृष्ण अपना पीताम्बर हिलाते चल रहे थे, कालयवन उनका पीछा करने गला। उसने कहा- दौड़ क्यों रहा है? श्रीकृष्ण ने कहा- प्रातःकाल का समय है, दौड़ने से शरीर में कुछ गर्मी आ जायेगी तो युद्ध का आनन्द बढ़ जायेगा। एक गुफा दिखाई पड़ी। श्रीकृष्ण उसमें प्रवेश कर गये। कालयवन बहुत प्रसन्न हुआ। अब कहाँ जायेगा? फँस गया। गुफा में राजर्षि मुचुकुन्द योगनिद्रा में तपस्या कर रहे थे। श्रीकृष्ण ने अपना पीताम्बर उनके ऊपर डाल दिया और ओट में खड़े हो गये। उन्हें ढूँढ़ता हुआ कालयवन पीताम्बर देख भ्रमवश उन्हें श्रीकृष्ण समझ बैठा, उन्हें पैर की ठोकर मारकर बोला- उठ! साक्षात् काल को निमन्त्रण देकर पीताम्बर ओढ़कर सोया है। ऋषि को एक लात मारा। ऋषि की दृष्टि पड़ते ही कालयवन भस्म हो गया।

ऋषि ने सोचा- यहाँ क्या हुआ? कौन मर गया? यहाँ कौन है? उन्होंने दाहिने-बायें दृष्टिपात किया। श्रीकृष्ण दिखाई पड़े। ऋषि ने उन्हें साष्टांग प्रणाम किया और निवेदन किया- भगवन्! आपकी ही प्रतीक्षा में मैं यहाँ कन्दरा में पड़ा हुआ था। आज आपने कृपा की, दर्शन दिया। भगवन्! यह कौन मर गया? श्रीकृष्ण ने कहा- कोई नहीं ऋषिवर! यह कालयवन था। इसे वरदान था कि मल्लयुद्ध में, अस्त्र-शस्त्र से यह कभी किसी से नहीं मरेगा। प्रत्येक वरदान में उसकी समाप्ति के अंकुर भी तो छिपे रहते हैं। अस्त्र से नही

तो आपके दृष्टिनिक्षेप मात्र से वह जल उठा। मुकाबला हुआ ही नहीं और यह मर गया। उसने आपको जगा दिया, आपने देख लिया, वह मर गया।

भगवान इस रहस्य को जानते थे कि कालयवन या ऋषि मुचुकुन्द को क्या वरदान प्राप्त है। यदि वह पहले ही घोषित कर देते कि मैं वहाँ ले जाऊँगा और वह ऐसे करेगा तो कालयवन क्या कभी गुफा में जाता? राजनीति में परिणाम दिखाई पड़ना चाहिए, योजना किसी पर प्रकट न होने पाये। योजना विदित होते ही सफलता संदिग्ध हो जाती है। परिणाम दिखाई पड़े, योजना नहीं। ऐसे मनोरथवाले संसार में कभी असफल नहीं होते।

सारांशतः भगवान श्रीकृष्ण की राजनीति, रावण की राजनीति या भगवान राम की राजनीति - सबके मूल में यही सूत्र था कि कार्यसिद्धि के पश्चात् ही लोगों को ज्ञात हो पाता था कि योजना क्या थी। इसलिए सीता-परित्याग मात्र इस योजना का क्रियान्वयन था कि एक महापुरुष के सिर का भार हल्का हो गया। दिव्यास्त्रों का संग्रह राजकीय उपयोग में आ गया और बच्चों की शिक्षा भी स्वतः सम्पन्न हो गयी।

❒ ❒ ❒

शम्बूक-प्रसंग

भगवान श्रीराम के इतिवृत्त में यह कथानक भी जुड़ा है कि उन्होंने तपस्यारत एक शूद्र शम्बूक की हत्या की, अतः राम दलितों के शत्रु थे। वह उन्हें अपना आदर्श क्यों मानें?

यह सवर्ण-अवर्ण, उच्च और दलित वर्ग का सृजन तो अभी हाल की घटनायें हैं। आदिकाव्य रामायण में वर्ण-व्यवस्था का नाम ही नहीं है। वर्ण के नाम पर समाज में कार्य-विभाजन की व्यवस्था डेढ़-दो हजार वर्षों की उधेड़बुन है जिससे समाज आज भी उबर नहीं पा रहा है। भगवान बुद्ध के समक्ष भी वर्ण-व्यवस्था का प्रश्न आया किन्तु उन्होंने इस व्यवस्था को समर्थन देने से नकार दिया। हजार-डेढ़ हजार वर्षों की राजनयिक उथल-पुथल ने सामाजिक व्यवस्था को वर्ण-व्यवस्था का नाम दे दिया।

आदि धर्मशास्त्र गीता में वर्ण आन्तरिक साधना के सोपान हैं। आत्मदर्शन की विधि, साधन-पद्धति का अनुशीलन करनेवाला साधना के आरम्भिक स्तर पर शूद्र कहलाता है, विधि प्राप्त होने पर दैवी सम्पद् का अर्जन होने लगता है तो वैश्य, प्रकृति के द्वन्द्वों से संघर्ष की क्षमता आने पर वही क्षत्रिय कहा जाता है तथा ब्रह्म में विलय की योग्यता आयी तो ब्राह्मण। भगवान का दर्शन, स्पर्श, प्रवेश और उनमें स्थितिप्राप्त महापुरुष तत्वदर्शी, कैवल्यज्ञानप्राप्त सद्गुरु हो जाता है। आप्तपुरुषों द्वारा साधना के लिए प्रयुक्त नामों के अनुरूप व्यवस्थाकारों ने सामाजिक विभागों का नाम ढाल दिया। प्राचीन भारत में जातिवाद कभी था ही नहीं।

गीता में भगवान श्रीकृष्ण ने निर्देश दिया है कि-

श्रेयान्स्धर्मो विगुणः परधर्मात्स्वनुष्ठितात्।
स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावह।। *(गीता, ३/३५)*

अर्जुन! '**श्रेयान्स्वधर्मो विगुणः**'- स्वभाव में पायी जानेवाली क्षमता के अनुसार कर्म अर्थात् आराधना-चिन्तन में लगना स्वधर्म है। साधक प्रवेशकाल

में है तो उसे महापुरुष की सेवा ही करना है। यदि वह सेवा छोड़कर ब्रह्मलीन महापुरुष होने का ढोंग करता है तो भय को प्राप्त होता है अर्थात् आवागमन को प्राप्त होता है। प्राथमिक कक्षाओं का छात्र स्नातक कक्षाओं में बैठने लगे तो वर्णमाला ज्ञान से भी वंचित रह जायेगा।

वर्णों की श्रेणियाँ साधना के क्रमोन्नत सोपान हैं-

ब्राह्मणक्षत्रियविशां शूद्राणां च परन्तप।
कर्माणि प्रविभक्तानि स्वभावप्रभवैर्गुणैः।। *(गीता, १८/४१)*

अर्जुन! इन चारों के कर्म को स्वभाव में पाये जाने वाले गुणों के अनुसार मैंने विभक्त किया है। यदि तामसी गुणों का बाहुल्य है तो चिन्तन में मन नहीं लगेगा। ऐसा व्यक्ति अल्पज्ञ है। मानव-तन मिला है, उसका कल्याण कैसे हो? ऐसे व्यक्ति का कर्त्तव्य है कि वह सत्पुरुषों, महापुरुषों की सेवा करे। सेवा, शरण, सानिध्य से विधि जागृत हो गयी तो वह वैश्य, संघर्षशील क्षत्रिय। इस प्रकार ये स्तर आत्मदर्शन की विधि के क्रमोन्नत सोपान हैं। भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं- जिसके स्वभाव में जो क्षमता है, उसी स्तर से कर्म में प्रवृत्त होना स्वभाव कहलाता है। यह आपका दायित्व है।

स्वे स्वे कर्मण्यभिरतः संसिद्धिं लभते नरः।
स्वकर्मनिरतः सिद्धिं यथा विन्दति तच्छृणु।। *(गीता, १८/४५)*

स्वभाव से उत्पन्न कर्म करने की क्षमता के अनुसार कर्म में लगा हुआ पुरुष भगवत्प्राप्तिरूपी परमसिद्धि जिस विधि से प्राप्त होती है, अर्जुन! उस विधि को मुझसे सुन-

यतः प्रवृत्तिर्भूतानां येन सर्वमिदं ततम्।
स्वकर्मणा तमभ्यर्च्य सिद्धिं विन्दति मानवः।। *(गीता, १८/४६)*

जिस परमात्मा से यावन्मात्र जगत की उत्पत्ति हुई है, जो कण-कण में सर्वत्र व्याप्त है, उस एक परमात्मा को स्वभाव से उत्पन्न कर्म करने की क्षमता के अनुसार अर्चन-पूजन कर मनुष्य परमसिद्धि को प्राप्त होता है। आरम्भिक

साधक शूद्र स्तर का है, अल्पज्ञ है, तब भी पूजन उसी परमात्मा का उसे करना है जो कण-कण में व्याप्त है, ज्योतिर्मय है, जिसके तेज से सृष्टि का पालन, सृजन और परिवर्तन होता है। मध्यम अवस्थावाला, जिसे विधि प्राप्त है, उस वैश्य स्तर के व्यक्ति को पूजा उसी परमात्मा की ही करनी है। क्षत्रिय और उससे भी उन्नत साधक को, जो प्राप्ति के समीप है, उसे भी पूजा उसी परमात्मा की करनी है तथा ब्रह्म में विलय की योग्यता आने पर-

शमो दमस्तपः शौचं क्षान्तिरार्जवमेव च।
ज्ञानं विज्ञानमास्तिक्यं ब्रह्मकर्म स्वभावजम्।। *(गीता, १८/४२)*

मन का सहज शमन, इन्द्रियों का सहज दमन, अनुभवी उपलब्धि, वास्तविक जानकारी, धारणा-ध्यान-समाधि, सरलता इत्यादि ब्रह्म में विलय दिला देनेवाली योग्यताएँ जिसके स्वभाव में ढल गयी हैं, वह ब्राह्मण है। वह उस स्तर से चिन्तन करे।

स्वभाव के अनुसार ही कर्म में लगा हुआ परमसिद्धि को प्राप्त होता है। पूजा एक परमात्मा की ही करनी है। स्वभाव से निर्धारित क्षमता के अनुसार करना है किन्तु व्यवस्थाकारों ने जीवनयापन के व्यवसायों को वर्ण का नाम दे दिया जिससे कालान्तर में में लोग यह भूल गये कि ये साधना के अन्तरंग सोपान हैं। चिन्तन साध्य है। लोग बाहर ही भटकने लगे, समाज में विकृति और परस्पर द्वेष का बीजारोपण हो गया।

अल्पज्ञ अवस्था का साधक यदि उन्नत श्रेणी के साधकों की अवस्था का अभिनय करता है, उनकी नकल करने का प्रयास करता है तो वह भय को प्राप्त होता है, आवागमन को प्राप्त होता है। इसी का चित्रण वाल्मीकि-रामायण के शम्बूक-प्रकरण में है। जन्मना, सामाजिक जाति की व्यवस्था का उल्लेख वाल्मीकि-रामायण में कहीं नहीं है। शूद्र शम्बूक अर्थात् अल्पज्ञ साधक जब सम वृत्ति (शम्बूक) का अभिनय करता है, ऐसी अवस्था में जो साधना जागृत हो गयी थी, जो ब्रह्मचिन्तन जागृत हो गया था, ब्राह्मणत्व का जो सूत्रपात हो गया था, वह मिट जाता है। यही ब्राह्मण बालक का मरना है।

रामराज्य में ब्राह्मण बालक की असामयिक मृत्यु हो गयी। वर्षों तक इसके कारणों की शोध की गयी। राम ने विभिन्न दिशाओं में अन्वेषण किया। पूर्व दिशा अर्थात् आरम्भिक अवस्थावाली दिशा में शूद्र को एक वृक्ष में उलटा लटका हुआ तपस्यारत देखा। अल्पज्ञ साधक ब्रह्मतत्वज्ञों का अभिनय कर रहा था। वह वृक्ष में ही लटका हुआ था– '**संसार विटप नमामहे**'– संसार-विटप की शाखाओं में ही झूल रहा था किन्तु अपने को शम्बूक कह रहा था, समत्व की वृत्ति का उच्चारण कर रहा था। राम ने त्यागरूपी तलवार से उसे नीचे गिरा दिया। उसके गिरते ही ब्राह्मण बालक तत्काल जीवित हो उठा, ब्राह्मणत्व पुनः जागृत हो गया, भटके हुए साधक की साधना ने गति पकड़ लिया।

मध्यकालीन युग में शिक्षा प्रतिबन्धित हो जाने से एक भ्रान्ति आयी कि राम ने शूद्र को मार दिया। किसी शूद्र को मारने से ब्राह्मण का कोई लड़का आज तक जिन्दा हुआ है क्या? आज ऐसा होता है क्या? अल्पज्ञ अवस्था का साधक यदि उन्नत श्रेणीवालों की नकल करेगा तो उसे संसार-विटप में ही झूलना है। उस अवस्था से नीचे आकर क्रमशः भजन करते हुए वह वैश्य, क्षत्रिय हो जाता है और वही उन्नत अवस्था होने से पुनः ब्रह्मतत्वप्राप्त ब्राह्मण कहलाता है। '**ब्रह्म जानाति ब्राह्मणः**'– वह ब्रह्मज्ञ ब्राह्मण हो जाता है।

वाल्मीकि-रामायण कोरा इतिहासग्रन्थ मात्र नहीं है; उद्धार का साधन भी है। इसमें यत्र-तत्र योगविधि, साधना-पद्धति का चित्रण है, जिसे न समझ पाने के कारण ही तरह-तरह के प्रश्न उठाये जाते हैं। उन्नत अवस्था की नकल करनेवाला अवागमन को प्राप्त होता है और भूल स्वीकार करते ही साधन क्रमशः आरम्भ हो जाता है। वाल्मीकि-रामायण में जाति-पाँति का उल्लेख कहीं नहीं है। यदि यही सही होता तो भगवान अपना प्रिय परिवार व्याध बाल्मीकि के आश्रम में क्यों छोड़ते! बाल्मीकि का भी उद्धार न होता, राम ने अधमों का उद्धार न किया होता। स्वच्छ वस्त्र धोबी के यहाँ क्यों जायेगा? भगवान तो पतितपावन हैं। हम पतित हैं और उन्हें पवित्र करना है।

❒ ❒ ❒

रुक्मिणी-प्रसंग

योगेश्वर भगवान श्रीकृष्ण का व्यक्तित्व एवं कृतित्व अमलात्मा महात्माओं तक का आदर्श रहा है, किन्तु निहित स्वार्थ के वशीभूत प्राणी उनके लोकेतर उदात्त चरित्र पर उँगली उठाकर अपनी दूषित मनोवृत्ति का ही परिचय देते हैं। एक का आरोप है कि अपनी पत्नी रुक्मिणी का परित्याग कर वे राधा के साथ रमण करते रहे। ऐसे मनगढ़न्त निष्कर्ष निकाल लेना उनके अज्ञान का ही द्योतक है।

वीतराग महर्षि द्वैपायन व्यास द्वारा रचित श्रीकृष्ण चरितामृत श्रीमद्‌भागवत में भगवान श्रीकृष्ण की लीलाओं का विवरण मिलता है। गोकुल में नन्दराय जी के यहाँ ग्यारह वर्षों तक बाल-लीलायें कर बारहवें वर्ष के प्रवेश में श्रीकृष्ण मथुरा चले आये, कंस का अन्त किया, शिक्षा प्राप्त की, राजकीय कार्यों में सहयोग देने लगे। अपने दामाद की मृत्यु का समाचार सुनकर मगध नरेश जरासंध ने मथुरा पर भयंकर आक्रमण किये। उसे पराजित करने पर भी श्रीकृष्ण ने उसका अन्त नहीं किया। हलधर बोले- कन्हैया! इसे मारते क्यों नहीं? छोड़ क्यों देते हो? श्रीकृष्ण ने कहा- दाऊ! यह हमारे नाना लगते हैं, पूजनीय हैं। एकान्त में श्रीकृष्ण ने कहा- दाऊ, पृथ्वी पर बहुत से निशाचर फैले हुए हैं। हम एक-एक को कहाँ तक ढूँढ़ते फिरेंगे? यह पराजित और क्रोधान्ध जरासंध उन सबको एकत्र कर यहाँ लाता रहेगा, उन्हें समाप्त करने के पश्चात् अंत में इसका भी क्रम आयेगा। जरासंध अट्ठारह बार मथुरा पर आक्रमण करता गया। श्रीकृष्ण ने मथुरा छोड़कर द्वारिका में राजधानी का निर्माण किया, जनता को वहाँ भेज दिया। स्वयं जरासंध को युद्ध के लिए ललकारते हुए एक पहाड़ पर चढ़े और दूसरी ओर से द्वारिका की ओर निकल गये।

दाऊ ने कहा- कन्हैया! तुम भाग रहे हो, लोग तुम्हें रणछोड़ कहेंगे, किन्तु मैं कायरों की तरह भाग नहीं सकता। श्रीकृष्ण ने कहा- दाऊ! मैं भाग

नहीं रहा हूँ, यह युद्धनीति है। अभी उन्हें खुश हो लेने दें। उनका अन्त अभी नहीं आया है। उनकी मृत्यु में किंचित् विलम्ब है। जरासंध और उसकी सेना ने उस पहाड़ी को चारों ओर से घेर लिया, उसमें आग लगा दी। दावानल जैसी विभीषिका से धायँ-धायँ पूरा पहाड़ जलने लगा। खुशी मनाता हुआ जरासंध लौट गया कि उन दोनों ग्वालों को मैंने भून डाला।

राजकुमारी रुक्मिणी का स्वयंबर होने लगा। उसके पिता उसका विवाह चेदि नरेश शिशुपाल से करना चाहते थे। रुक्मिणी भगवान श्रीकृष्ण में अनुरक्त थी। उसने श्रीकृष्ण से रक्षा की याचना की। श्रीकृष्ण वहाँ गये और रुक्मिणी को लेकर चले आये, उससे विधिवत विवाह किया। शादी-विवाहों द्वारा पड़ोसी नरेशों की मैत्री और सहायता से राजतंत्र को सुदृढ़ करना तत्कालीन प्रथा थी जिसके कारण श्रीकृष्ण के प्रासाद में आठ पटरानियाँ थीं। इतने वर्षों में श्रीकृष्ण एक बार भी लौटकर मथुरा या वृन्दावन गये ही नहीं। राधा के संरक्षण में गोपियाँ भजन-चिन्तन करती रहीं; फिर भी लोगों का आक्षेप है कि रुक्मिणी जैसी पत्नी के होते हुए भी वे राधा के साथ रमण करते रहे।

गीता के एकादश अध्याय के चौवालिसवें श्लोक की व्याख्या के क्रम में 'यथार्थ गीता' में कहा है कि श्रीकृष्ण ने गीता में ओम् शब्द जपने का निर्देश दिया है किन्तु लोगों की भावुकतावश 'राधे राधे श्याम मिला दे' की ध्वनि से वृन्दावन गूँजता ही रहता है। राधा एक बार बिछड़ी तो श्याम से फिर नहीं मिल पायी तो तुम्हें कैसे मिला दे? कुछलोगों ने प्रश्न किया कि महराज जी ने ऐसा क्यों लिख दिया? राधा एक बार प्रभास क्षेत्र में श्याम से मिली थीं। हमने बताया- मरनी-करनी में तो सभी श्रद्धांजलि देने आते हैं, यह कोई मिलना हुआ?

राधा रमण- यह यौगिक शब्द है। महात्मा लोग स्वाँस में रमण करते हैं, योगाचार में रमण करते हैं। जहाँ राधा है, वहीं कृष्ण हैं। अर्थात् 'र' की धारा में रमण करते हैं, भगवान उन्हीं के साथ हैं। राधा भजनानन्दियों की आदर्श हैं। सबको राधा की तरह सदैव श्रीकृष्ण के चिन्तन में तल्लीन रहना

चाहिए। भगवत्कथामृत के रसिक भक्तों में एक कथा का प्रचलन है कि ज्ञानी उद्धव को भक्ति का प्रशिक्षण देने भगवान ने उन्हें वृन्दावन भेजा था। उद्धव के ब्रह्मज्ञान की मथुरा में बड़ी चर्चा थी। वह लोगों को उपदेश दे रहे थे कि आप ब्रह्म हो, आत्मा हो। ज्योतिस्वरूप परमात्मा को योग-साधना से अपने भीतर देखने का प्रयास करो। भगवान ने देखा, यह व्यर्थ ही समय नष्ट कर रहे हैं, इन्हें तो साधन की जानकारी ही नहीं है। उनके सुधार के लिए भगवान उदास होकर बैठ गये। उद्धव ने जानना चाहा कि वह उदास क्यों हैं? श्रीकृष्ण ने कहा- उद्धवजी! ये गोपियाँ मेरे वियोग में 'हे कृष्ण, हे कृष्ण' रात-दिन रट लगाये पड़ी हैं। मैं उन्हें कैसे समझाऊँ कि शासन-प्रबन्ध कितना कठिन कार्य है। मेरे सिर पर कितना दायित्व है। भला मैं वहाँ कैसे जाऊँ? यह उत्तरदायित्व छोड़कर वहाँ जा नहीं सकता और उनका रुदन रूक नहीं सकता, इसलिए दुखी हूँ। उद्धव ने कहा- केशव! आप निश्चिन्त रहें। मैं उन्हें ब्रह्मज्ञान का उपदेश देकर आत्मतृप्त कर दूँगा, फिर वे कभी आपके लिए नहीं तड़पेंगी। श्रीकृष्ण ने कहा- शीघ्रता करो उद्धव! हमें तुमसे यही आशा थी।

ज्ञानी उद्धव वृन्दावन पहुँचे। राधिका के संरक्षण में सभी गोपियाँ 'हे कृष्ण गोविन्द मोहन मुरारी' का संकीर्तन कर रही थीं। उद्धव जी दिखाई पड़े। सबने उन्हें अभिवादन किया, पूछा- आप तो मथुरा से आये हैं, बतायें हमारे कन्हैया कैसे हैं? उद्धव ने उन्हें समझाया- क्या कन्हैया-कन्हैया की रट लगा रखी हो? तुम आत्मा हो, स्वरूप देखो। संसार नश्वर है, आत्मा शाश्वत है। ब्रह्म तुमसे भिन्न नहीं है। भेद-भक्ति छोड़ो। ईश्वर का ध्यान करो। राधा ने कहा-

ऊधौ! मन न भये दस बीस।
एक हुतो सो गयो स्याम संग, को आराधै ईस।।

मन तो एक था, वह श्याम के साथ चला गया। अब आप द्वारा उपदिष्ट ईश्वर की आराधना किस मन से करें। मन दस-बीस तो होते नहीं। सत्संग आगे बढ़ने पर उद्धव ने गोपियों को नमन किया, ध्यानस्थ हो गये तो वहाँ श्रीकृष्ण थे, राधा थी, गोपियाँ भी थीं। भगवान का उद्घोष है-

नाहं वसामि वैकुण्ठे योगिना हृदये न च।
मद्भक्ताः यत्र गायन्ति तत्र तिष्ठामि नारदः।।

ज्ञानी उद्धव, भक्त उद्धव बनकर लौटे। वह भी उसी विधि से श्रीकृष्ण-चिन्तन में अनुरक्त हो गये। गये थे गुरु बनने, शिष्य बनकर लौटे। अस्तु जो भक्त होता है, जिसकी वृत्ति 'र' की धारा में रमण करती है, भगवान सदा उसके साथ रहते हैं। नन्दा नाई का वेष बनाकर उसका उद्धार कर दिया। चाण्डाल सूपा भगत को सर्वोपरि महात्मा घोषित कर दिया। सूत-पुत्र विदुर के घर साग-पत्ती ही खा लिया। अर्जुन को अहंकार हो गया तो एक तपस्वी से उसका परिमार्जन करा दिया। भगवान तो भाव के भूखे हैं, यही राधा रमण का आशय है।

❒ ❒ ❒

चीर-हरण

श्रीकृष्ण की चीर-हरण लीला और रासलीला को अश्लील तथा मर्यादाविरुद्ध घोषित करने के प्रयास होते ही रहते हैं। यह भी वास्तविकता से मुख मोड़ने जैसा ही है। ग्रामीण परिवेश में पाँच-सात साल तक के बच्चे नंगे रहते ही हैं। माताओं के मध्य उनका या माताओं की क्रीड़ाओं को अस्वाभाविक कहना न्यायोचित नहीं है और न यह अश्लीलता की परिधि में ही आता है। वस्तुतः इन प्रसंगों के आध्यात्मिक निहितार्थ हैं। योगरूपी यमुना में प्रवेश करने पर चित्तरूपी चीर का भगवान हरण कर लेते हैं। भगवत्कृपा से, श्रद्धा-समर्पण से पूरित होने पर चीर साधक की रहनी-गहनी में परिलक्षित होती है।

चीर लेकर वृक्ष पर चढ़ना अचेत आत्माओं को जगाना था। उनकी श्रद्धा को विकसित करना था। अपनी भक्ति का संदेश देना मात्र था। **'मोहनिशाँ सबु सोवनिहारा।'** *(मानस, २/९२/२)*, **'या निशा सर्वभूतानां तस्यां जागर्ति संयमी।'** *(गीता, २/६९)*- जगत्रूपी रात्रि में जीव अचेत पड़े हैं। उन्हें जगत्रुपी रात्रि से जगाना, भजन-चिन्तन में प्रवृत्त करना भगवान की अहैतुकी करुणा मात्र है। गोपियों ने वृक्षारूढ़ कन्हैया से वस्त्र माँगे। भगवान ने कहा- आओ, पहचान कर अपने वस्त्र ले लो। गोपियों की समस्या थी कि निर्वस्त्र कैसे बाहर निकलें। श्रीकृष्ण ने पूछा- आपलोग गयी कैसे थीं? उन्होंने कहा- तब वहाँ कोई नहीं था। श्रीकृष्ण ने कहा- था कैसे नहीं? अपने हृदय में देखो कौन है? वहाँ कृष्ण दिखाई पड़े। कहा- जल में देखो कौन है? वहाँ भी कृष्ण दिखाई पड़े। जल में, थल में, ऊपर-नीचे चतुर्दिक कृष्ण ही विराजमान थे। अब कृष्ण को हाथ जोड़कर बाहर आने में उन्हें क्यों आपत्ति होती? इस लीला से भगवान ने अपने स्वरूप का परिचय दिया। गोपियों की निष्ठा दृढ़ हो गयी। उस दिन से गोपियाँ भक्तिमार्ग की पराकाष्ठा पर प्रतिष्ठित हो गयीं, फिर कभी पदच्युत नहीं हुईं।

गोकुल में रहकर श्रीकृष्ण ने अनेक लीलाएँ कीं। उन सबका एक ही प्रयोजन था - अनन्यता के साथ एक परमात्मा में निष्ठा व समर्पण। गोवर्धन उठाना, कालिया का मानमर्दन, केशी इत्यादि निशाचरों का अन्त, कंस के निमित्त यज्ञ कर रहे ब्राह्मणों का यज्ञ बन्द कराना, उन्हें अपनी भक्ति में लगा लेना भक्ति का प्रशिक्षण मात्र था। कई अवसरों पर भक्ति की परीक्षाओं में रुक्मिणी, सत्यभामा इत्यादि की साधनाएँ पीछे रह गयीं, गोपियाँ आगे निकल गयीं। चीर-हरण लीला द्वारा उन्होंने जगत्‌रूपी रात्रि में अचेत पड़े जीवों को अपने स्वरूप का बोध कराया कि भगवान से हम-आप क्या छिप सकते हैं? वह सर्वत्र आँखवाला है, सर्वत्र हाथ-पैरवाला है। इतना ही नहीं, वह बिना हाथ-पैर के सर्वत्र सभी कुछ करता है, देखता है, सुनता है, सक्षम है। बाल्यकाल में भगवान ने जिन्हें प्रशिक्षण दिया, वे शिष्य सर्वोपरि निकले। उनमें से कभी कोई पतित नहीं हुआ।

❐ ❐ ❐

पूतना-वध

गोकुल में श्रीकृष्ण का जन्मोत्सव मनाया जा रहा था। कंस की सैन्य टुकड़ी गोकुल में आ गयी थी। उन्होंने पूछा- यह उत्सव कैसा? ग्वालबालों ने बताया- नन्द बाबा के लल्ला की छठी का उत्सव मनाया जा रहा है। सैनिकों ने कहा- आज उस बालक का अन्तिम दिन है, छठी का दूध उसे याद रहेगा। उन्होंने हमला कर दिया। ग्वालबालों ने पत्थर मारकर उन सैनिकों को भगा दिया।

कंस ने यह सुना। उसने अधिक सैन्यबल भेजना चाहा किन्तु मंत्रियों ने परामर्श दिया कि इससे जनता में बगावत फैल सकती है। अतः कृष्ण की गोपनीय ढंग से हत्या के लिए पूतना नामक राक्षसी को भेजा गया। हजारों शिशुओं की हत्या करते हुए कृष्ण की हत्या करने पूतना नन्दराय के घर आयी थी। कृष्ण की हत्या के पश्चात् गाँव के सम्पूर्ण शिशुओं की हत्या करने वह आयी ही थी। जनपद को पूतविहीन करना ही उसका कार्य था। 'यथा नाम तथा गुण'।

उसने कृष्ण को गोद में उठा लिया और मर गयी। लोगों का आक्षेप है- कृष्ण ने पूतना को मार डाला। एक माह से पहले बच्चों की मुट्ठी भी नहीं खुलती। खुल भी गयी तो दो इंच के भीतर अँगुलियाँ, हथेली सब आ जायेगी। उस शिशु ने कौन-सी छुरी भोंक दी या गला दबा दिया जो मार डाला?

वस्तुतः कृष्ण को अपनी गोद में पाकर पूतना आह्लादित हो उठी कि जो कार्य कंस की पूरी सेना नहीं कर सकी, आज वह मैं करने जा रही हूँ। बहुत से बच्चों को विषयुक्त स्तनपान द्वारा उसने मारा था। उसे कृष्ण की मृत्यु में संदेह नहीं रहा। कंस ने वादा भी किया था कि सफल होने पर दक्षिणवाला साम्राज्य तुम्हारा होगा। अत्यधिक खुशी में प्रायः हृदयाघात हो जाया करता है। धमनियाँ फट गयी होंगी, बेचारी मर गयी; किन्तु छिन्द्रान्वेषण करनेवालों को संतोष कहाँ?

इतिहास इस तरह के कथानकों से भरे पड़े हैं। औरंगजेब की चालों में आकर जोधपुर नरेश जशवन्त सिंह ने अपने पुत्र को शेर से निहत्था लड़ा दिया। लड़के ने शेर को मार डाला। औरंगजेब ने एक विषसिक्त पोशाक उसे उपहार में पहनने को दिया जिससे उसकी मृत्यु हो गयी। कृष्ण के लिए उस पूतना ने तो कुछ अधिक ही कालकूट विष का लेपन कर लिया था क्योंकि कृष्ण ही तो उसके लक्ष्य थे। संभव है उसी से उसकी मृत्यु हो गयी हो।

व्यास सरोवर पर दुर्योधन की जाँघ टूट गयी किन्तु वह मरा नहीं। उसने अश्वत्थामा से पाण्डवों का सिर काट लाने को कहा। अश्वत्थामा गया और राम में सोये हुए पाण्डव-पुत्रों का सिर उन्हें पाँचों पाण्डव समझकर काट लाया, दुर्योधन को दे दिया। दुर्योधन ने कहा- भीम का सिर मैं अपनी गदा से तोड़ूँगा। गदा से प्रहार करते ही वह सिर चकनाचूर हो गया। दुर्योधन ने कहा- यह भीम का सिर नहीं हो सकता। सैकड़ों बार उस पर मेरी गदा का प्रहार हुआ है, उससे चिनगारी छिटकती थी। यह पाण्डवों के सिर नहीं हो सकते।

चन्द्रमा के क्षीण प्रकाश में उन सिरों को ध्यान से देखने पर दुर्योधन बहुत रोया। वह बोला- दुष्ट ब्राह्मण! तुमने तो मेरे वंश का ही मूलोच्छेद कर दिया। यह सिर तो पाण्डव-पुत्रों के हैं। पाण्डव अब वृद्ध हो गये हैं, अब उन्हें बच्चे तो होंगे नहीं, यह बच्चे ही हमारी वंशबेलि थे। तुमने हमारा वंश ही नष्ट कर दिया। हत्यारे! दुष्ट! भाग मुँह काला कर। दुर्योधन हाय करता मर गया। अत्यन्त प्रसन्नता और अत्यन्त शोक में हृदय की गति रुक जाया करती है। वह जाँघ टूटने से नहीं मरा किन्तु शोक में मर गया। इसी प्रकार पूतना ही अति प्रसन्नता ने ही उसे मार डाला। इसमें श्रीकृष्ण का दोष ढूँढ़ना अज्ञान अथवा आक्रोशमात्र है, आसुरी स्वभाव की देन है। पूतना प्रकरण एक धार्मिक उपाख्यान है जिसे हृदयंगम करने के लिए सत्पुरुषों का सत्संग आवश्यक है।

वास्तव में दैवी सम्पद् देवकी है। श्वास वासुदेव है जिसमें परमात्मा का निवास है, जिसका विधिवत यजन करने से भगवान हृदय में जागृत हो जाते

हैं। वह हृदय से रथी हो जाते हैं, यही कृष्ण का जन्म है। वह गोकुल अर्थात् इन्द्रिय-संयम में पलने लगते हैं। कर्मरूपी कंस से संचालित प्रकृतिरूपी पूतना विषयरूपी विष लेकर आती है। उसने जहाँ श्रीकृष्ण का स्पर्श किया, प्रकृति मर जाती है, भगवान के रूप में परिवर्तित हो जाती है। अघासुर, बकासुर सब शान्त होते चले जाते हैं। यह योगविधि है, साधन-पद्धति है।

।। ॐ ।।

ॐ

* आर्य, सनातन, हिन्दू-धर्म *

सृष्टि के आदि धर्मशास्त्र 'गीता' से ही धर्म के तीन आदर्श नाम–
आर्य, सनातन और हिन्दू को लिया गया है।
तीनों का आशय एक ही है जो गीता की एक निर्धारित साधना-विधि है।
जिसे नीचे दर्शाया गया है–

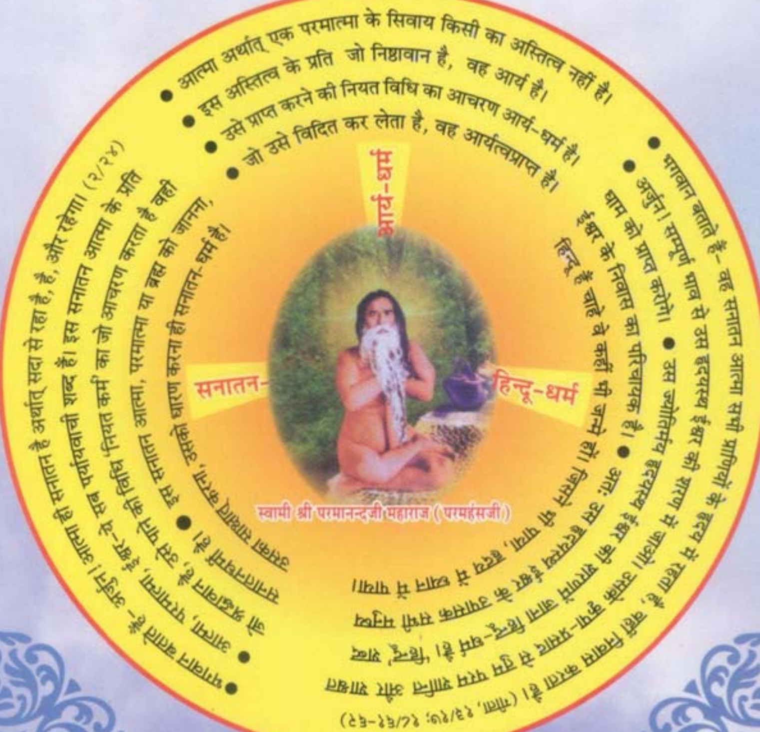

श्री परमहंस स्वामी अड़गड़ानन्दजी आश्रम ट्रस्ट

न्यु अपोलो इस्टेट, गाला नं. ५/११, अवध नारायण तिवारी मार्ग, (मोगरा लेन), अंधेरी (पूर्व),
मुम्बई - ४०० ०६९, भारत. • दूरध्वनी : ०२२-२८२५ ५३००
ईमेल : contact@yatharthgeeta.com • वेबसाइट : www.yatharthgeeta.com